सरस दरबारी

ई-मेल- sarasdarbari@gmail.com

प्रहार...!

एक खुशहाल गाँव था। तब वर्ण व्यवस्था नहीं थी। लोगों के बीच प्रेम सौहार्द और अपनापा था। एक दूसरे के सुख-दुःख का हिस्सा बनने को अग्रसर। पंडित की बिटिया की शादी में कुम्हार के घर से कुल्हड़-सकोरे बनकर आते। नाई बारातियों की मुफ्त में हजामत करते। गाँव की सारी औरतें मिल-जुलकर भोज की ज़िम्मेदारी उठातीं।

सब मिलकर मंगल गीत गाती हुई, दुल्हन की चूनर में गोटा और किरण टाँकतीं। बरात की आवभगत तो यूँ होती मानो गाँव की बिटिया ब्याही हो।

और बिटिया की विदाई में सारा गाँव रोता।

हर शादी-ब्याह में यही माहौल रहता; बस घर बदल जाते। कभी वह कुम्हार की बेटी होती, कभी दर्ज़ी की तो कभी कूड़ा बटोरने वाले की। उसी अपनेपन से लोग मिलकर हर कार्य निबटाते, चाहे शिशु की छठी, जन्मदिन हो, पूजा हो, त्यौहार हो या मातम।

सभी एक-दूसरे की इज़्ज़त करते, क्योंकि उनकी दृष्टि में कोई काम बड़ा या छोटा नहीं था। हर कार्य का अपना महत्व था और इसीलिए गाँव का हर व्यक्ति महत्वपूर्ण था।

फिर एक दिन उस व्यवस्थित गाँव को सुधारने का जिम्मा व्यवस्था ने अपने हाथों में ले लिया।

गाँव की उन्नति के लिये बाज़ार को आमंत्रित किया गया। लोगों से कहा—

"बहनो और भाइयो, विश्व की ओर देखिये, कितनी तरक्की कर रहा है; और आप अभी तक कुएँ के मेढक बने हुए हैं। क्या आप नहीं चाहते—और प्रदेशों की तरह आपकी भी तरक्की हो, आप स्मार्ट सिटी, एक उन्नत शहर कहलाएँ?"

लोगों को सुन्दर परिधानों, आधुनिक उपकरणों के विज्ञापन दिखाए गये। आँखें चौंधिया गयीं सबकी।

"क्या वाकई हमें यह-सब मिल सकता है?"

"क्या हम भी ऐसी ज़िन्दगी जी सकते हैं?"

"क्यों नहीं, यह-सब आप ही के लिये तो है!"

बड़ी चालाकी से बाजार ने अपना साम्राज्य जमा लिया, और पूरा गाँव गुलाम हो गया।

अब लोगों में होड़ लगने लगी।

उसकी कमीज मेरी कमीज से सफ़ेद कैसे...!

गला-काट स्पर्धा शुरू हो गयी।

सौहार्द विलीन हो गया।

मनों में द्वेष पलने लगा।

दिखावे की होड़ लग गयी।

अपनी नामवरी के लिये सभी एक दूसरे को दबाने की जुगत में लग गये।

प्यार, अपनापन, भाईचारा, सब बीते दिनों की बातें हो गयीं।

व्यवस्था ने एक और घिनौनी चाल चली। अपना उल्लू सीधा करने के लिये गाँव की एकता पर ज़बरदस्त प्रहार किया। उसे वर्णों में बाँट दिया।

रही सही कसर इस प्रथा ने पूरी कर दी।

वह गाँव स्मार्ट सिटी तो बन गया पर सामाजिक समरसता ने दम तोड़ दिया।

मानवता अब तक उसकी लाश ढो रही है।

रिश्तों का गणित

निमित्त से बरसों बाद मिलना हुआ। विवाह को कोई 6 साल हो चुके थे। एक बेटी थी। भरा-पूरा संयुक्त परिवार। सभी साथ रहते थे।

हम दोनों बुआ-भतीजे में खूब छनती। उसकी शादी के बाद पहली बार मिल रही थी। सब-कुछ अच्छा था; पर, मेरी भतीज-बहू रीमा, थोड़ी बुझी-बुझी लगी।

"क्या बात है बेटा, देख रही हूँ बहुत चुप रहने लगी हो।"

"बुआ, इनके पास बिल्कुल समय नहीं रहता। थककर चूर लौटते हैं और भोजन करते ही सो जाते हैं। दो बात करने को तरस जाती हूँ।"

"यह तो मैं भी महसूस कर रही हूँ। जब से आयी हूँ, देख रही हूँ। सवेरे से रात तक मरीज़ों में उलझा रहता है। बात करती हूँ उससे।"

एक दिन मौका पाकर उसे बैठा ही लिया।

"सुनो बेटा, यहाँ आओ, हमारे पास भी बैठो। दिनभर मरीज़ों में उलझे रहते हो, थकते नहीं।"

"थकान कैसी बुआ, काम तो ऊर्जा देता है। जब लोगों को आराम मिलता है दुआ देते हैं तो सारी थकान मिट जाती है।"

"बेटा, मरीज़ों के अलावा, घर के प्रति भी तो कुछ दायित्व हैं।"

"मतलब?"

"परिवार के साथ, रीमा के साथ कितना समय बिताते हो?"

"साथ ही तो रहते हैं सब—माँ पिताजी, बड़े भाईसाहब, उनका परिवार, बच्चे। मेरी क्या ज़रूरत?"

"और रीमा? उसकी ज़रूरत का क्या?"

"भरा-पूरा घर है, अकेली कहाँ है वह।"

"तुम्हारे विवाह को 6 वर्ष बीत गये। आते ही रीमा परिवार की सेवा में लग गयी। दिन-रात वही काम, आसपास वही चेहरे, वही दिनचर्या। कभी सोचा— उसकी भी कोई इच्छा होगी? कुछ समय तुम्हारे साथ बिताना चाहती हो, कहीं घूमने जाना चाहती हो? अच्छा यह बताओ— उसे आखरी बार घुमाने कब ले गये थे?"

"अभी 3 वर्ष पहले तो वैष्णो देवी गये थे।"

"सिर्फ तुम दोनों?"

"नहीं, पूरा परिवार साथ था।"

"बेटा, दिनभर की थकी स्त्री के पास अगर पति दस मिनिट बैठकर उसका हाल-चाल ले लेता है तो उसकी ऊर्जा दुगनी हो जाती है। समझ लो, बैटरी चार्ज हो जाती है। तुम तो काम के सिलसिले में रोज़ लोगों से मिल लेते हो। बातें कर लेते हो, मन बहल जाता है। पर, रीमा के बारे में सोचो। हफ्ते महीने साल निकल जाते हैं और उसके जीवन में कहीं कोई बदलाव नहीं। वही चेहरे, वही दिनचर्या, कोई रोमाँच नहीं। कभी गौर से देखा है उसे? हरदम खुश रहने वाली रीमा कितनी मुरझा गयी है। क्या तुम्हारा फर्ज़ नहीं बनता, कि उसे कुछ समय दो।"

"आप मेरी दिनचर्या देख रही हैं न बुआ, कहाँ से समय निकालूँ।"

"बेटा, हम सब के पास हैं तो वही दिन के 24 घंटे ना। लेकिन, उन्हें प्राथमिकताओं के हिसाब से बाँटना होता है। हर रिश्ता समय माँगता है, पर एक जीवनसाथी के साथ एक सुन्दर रिश्ता कायम करना बहुत ज़रूरी है। इसे जितना समय दोगे, उतनी ही प्रगाढ़ता आएगी। अभी न चेते, तो यह समय बीत जायेगा और रिश्तों में अनबूझा ठहराव आ जायेगा। ठहरे पानी पर काई जमा हो जाती है। समझ रहे हो न? अपने रिश्ते में कभी काई न जमने देना।"

रिश्तों का गणित, निमित्त, गौर से सुन रहा था।

माँग

सरस दरबारी

"देखो शिखर, मैं तुमसे पहले ही कह चुकी हूँ कि मैं तुम्हारी माँ के साथ नहीं रह सकती।"

"यह बताओ तनु, क्या अपनी माँ के लिये भी यही भावनाएँ हैं तुम्हारी?"

"उनके लिये क्यों होंगी। वह पढ़ी-लिखी स्मार्ट हैं, सोसाइटी में उनका रुतबा है, शान है इज़्ज़त है; और तुम्हारी माँ वज्र देहाती। उन्हें अपनी सहेलियों से मिलाने में भी शर्म आती है।...मैं एक ही शर्त पर तुमसे शादी करूँगी कि अपनी माँ को छोड़ दो।"

"छोड़ दो मतलब?"

"मतलब किसी वृद्धाश्रम भेज दो, किसी रिश्तेदार के घर, कहीं भी।"

"तनु, बचपन में एक कहानी पढ़ी थी—

एक युवक एक युवती को बहुत चाहता था और उसे किसी कीमत पर खोने को तैयार न था।...युवती ने उससे पूछा—'मुझे कितना चाहते हो?' युवक ने कहा—'आजमा कर देख लो।' युवती ने कहा—'अपनी माँ का दिल लाकर दे सकते हो?' और बेटे ने लाकर दे दिया।

कहानी पढ़कर विश्वास ही नहीं हुआ था। क्या कोई ऐसी माँग भी रख सकता है? दिल नहीं माना। नहीं-नहीं, सिर्फ कहानी है। ऐसा वास्तव में थोड़ी होता है। पर आज जाना—यह सच है, कहानी नहीं।...शुक्रिया समय रहते चेताने के लिये।"